Hanuman-Bahuk
(Hindi)

॥ श्रीहरि: ॥

प्रस्तावना

संवत् १६६४ विक्रमाब्दके लगभग गोस्वामी तुलसीदासजीकी बाहुओंमें वात-व्याधिकी गहरी पीड़ा उत्पन्न हुई थी और फोड़े-फुंसियोंके कारण सारा शरीर वेदनाका स्थान-सा बन गया था। औषध, यन्त्र, मन्त्र, त्रोटक आदि अनेक उपाय किये गये, किन्तु घटनेके बदले रोग दिनोंदिन बढ़ता ही जाता था। असहनीय कष्टोंसे हताश होकर अन्तमें उसकी निवृत्तिके लिये गोस्वामी तुलसीदासजीने हनुमान्‌जीकी वन्दना आरम्भ की। अंजनीकुमारकी कृपासे उनकी सारी व्यथा नष्ट हो गयी। यह वही ४४ पद्योंका 'हनुमानबाहुक' नामक प्रसिद्ध स्तोत्र है। असंख्य हरिभक्त श्रीहनुमान्‌जीके उपासक निरन्तर इसका पाठ करते हैं और अपने वांछित मनोरथको प्राप्त करके प्रसन्न होते हैं। संकटके समय इस सद्य:फलदायक स्तोत्रका श्रद्धा-विश्वासपूर्वक पाठ करना रामभक्तोंके लिये परमानन्ददायक सिद्ध हुआ है। मेरे कनिष्ठ बन्धु पं० बेनीप्रसाद मालवीय जो इस समय पुलिस ट्रेनिंग स्कूल, मुरादाबादमें प्रोफेसर हैं, श्रीहनुमान्‌जीके अत्यन्त प्रेमी भक्त हैं। उन्हींके अनुरोधसे मैंने बाहुककी यह टीका तैयार की है। आशा है, रामानुरागी सज्जनोंको बाहुकके पद्योंका भावार्थ समझनेमें इससे बहुत कुछ सहायता प्राप्त होगी।

मिति चैत्र शुक्ल १ सोमवार
संवत् १९९० विक्रमीय

सज्जनोंका कृपाकांक्षी
महावीरप्रसाद मालवीय वैद्य 'वीर'
ज्ञानपुर बनारस स्टेट (मिर्जापुर)

श्रीगणेशाय नम:

श्रीजानकीवल्लभो विजयते

श्रीमद्‌गोस्वामितुलसीदासकृत

हनुमानबाहुक

छप्पय

सिंधु-तरन, सिय-सोच-हरन, रबि-बालबरन-तनु।
भुज बिसाल, मूरति कराल कालहुको काल जनु॥
गहन-दहन-निरदहन-लंक नि:संक, बंक-भुव।
जातुधान-बलवान-मान-मद-दवन पवनसुव॥
कह तुलसिदास सेवत सुलभ, सेवक हित संतत निकट।
गुनगनत, नमत, सुमिरत, जपत, समन सकल-संकट-बिकट॥ १॥

भावार्थ—जिनके शरीरका रंग उदयकालके सूर्यके समान है, जो समुद्र लाँघकर श्रीजानकीजीके शोकको हरनेवाले, आजानुबाहु, डरावनी सूरतवाले और मानो कालके भी काल हैं। लंकारूपी गम्भीर वनको, जो जलानेयोग्य नहीं था, उसे जिन्होंने निःशंक जलाया और जो टेढ़ी भौंहोंवाले तथा बलवान् राक्षसोंके मान और गर्वका नाश करनेवाले हैं, तुलसीदासजी कहते हैं—वे श्रीपवनकुमार सेवा करनेपर बड़ी सुगमतासे प्राप्त होनेवाले, अपने सेवकोंकी भलाई करनेके लिये सदा समीप रहनेवाले तथा गुण गाने, प्रणाम करने एवं स्मरण और नाम जपनेसे सब भयानक संकटोंको नाश करनेवाले हैं॥ १॥

स्वर्न-सैल-संकास कोटि-रबि-तरुन-तेज-घन।
उर बिसाल, भुजदंड चंड नख बज्र बज्रतन॥

पिंग नयन, भृकुटी कराल रसना दसनानन।
कपिस केस, करकस लँगूर, खल-दल बल भानन॥
कह तुलसिदास बस जासु उर मारुतसुत मूरति बिकट।
संताप पाप तेहि पुरुष पहिं सपनेहुँ नहिं आवत निकट॥ २॥

भावार्थ—वे सुवर्णपर्वत (सुमेरु)-के समान शरीरवाले, करोड़ों मध्याह्नके सूर्यके सदृश अनन्त तेजोराशि, विशालहृदय, अत्यन्त बलवान् भुजाओंवाले तथा वज्रके तुल्य नख और शरीरवाले हैं। उनके नेत्र पीले हैं, भौंह, जीभ, दाँत और मुख विकराल हैं, बाल भूरे रंगके तथा पूँछ कठोर और दुष्टोंके दलके बलका नाश करनेवाली है। तुलसीदासजी कहते है—श्रीपवनकुमारकी डरावनी मूर्ति जिसके हृदयमें निवास करती है, उस पुरुषके समीप दुःख

और पाप स्वप्नमें भी नहीं आते॥ २॥

झूलना

पंचमुख-छमुख-भृगुमुख्य भट-असुर-सुर,
सर्व-सरि-समर समरत्थ सूरो।
बाँकुरो बीर बिरुदैत बिरुदावली,
बेद बंदी बदत पैजपूरो॥
जासु गुनगाथ रघुनाथ कह, जासु बल,
बिपुल-जल-भरित जग-जलधि झूरो।
दुवन-दल-दमनको कौन तुलसीस है
पवनको पूत रजपूत रूरो॥ ३॥

भावार्थ—शिव, स्वामिकार्तिक, परशुराम, दैत्य और देवतावृन्द सबके

युद्धरूपी नदीसे पार जानेमें योग्य योद्धा हैं। वेदरूपी वन्दीजन कहते हैं—आप पूरी प्रतिज्ञावाले चतुर योद्धा, बड़े कीर्तिमान् और यशस्वी हैं। जिनके गुणोंकी कथाको रघुनाथजीने श्रीमुखसे कहा तथा जिनके अतिशय पराक्रमसे अपार जलसे भरा हुआ संसार-समुद्र सूख गया। तुलसीके स्वामी सुन्दर राजपूत (पवनकुमार)-के बिना राक्षसोंके दलका नाश करनेवाला दूसरा कौन है? (कोई नहीं)॥ ३॥

घनाक्षरी

भानुसों पढ़न हनुमान गये भानु मन-
अनुमानि सिसुकेलि कियो फेरफार सो।
पाछिले पगनि गम गगन मगन-मन,
क्रमको न भ्रम, कपि बालक-बिहार सो॥

कौतुक बिलोकि लोकपाल हरि हर बिधि
लोचननि चकाचौंधी चित्तनि खभार सो।
बल कैधौं बीररस, धीरज कै, साहस कै,
तुलसी सरीर धरे सबनिको सार सो॥ ४॥

भावार्थ—सूर्यभगवान्‌के समीपमें हनुमान्‌जी विद्या पढ़नेके लिये गये, सूर्यदेवने मनमें बालकोंका खेल समझकर बहाना किया [कि मैं स्थिर नहीं रह सकता और बिना आमने-सामनेके पढ़ना-पढ़ाना असम्भव है]। हनुमान्‌जीने भास्करकी ओर मुख करके पीठकी तरफ पैरोंसे प्रसन्नमन आकाशमार्गमें बालकोंके खेलके समान गमन किया और उससे पाठ्यक्रममें किसी प्रकारका भ्रम नहीं हुआ। इस अचरजके खेलको देखकर इन्द्रादि लोकपाल, विष्णु, रुद्र और ब्रह्माकी आँखें

चौंधिया गयीं तथा चित्तमें खलबली-सी उत्पन्न हो गयी। तुलसीदासजी कहते हैं—सब सोचने लगे कि यह न जाने बल, न जाने वीररस, न जाने धैर्य, न जाने हिम्मत अथवा न जाने इन सबका सार ही शरीर धारण किये हैं॥ ४॥

भारतमें पारथके रथकेतु कपिराज,
गाज्यो सुनि कुरुराज दल हलबल भो।
कह्यो द्रोन भीषम समीरसुत महाबीर,
बीर-रस-बारि-निधि जाको बल जल भो॥
बानर सुभाय बालकेलि भूमि भानु लागि,
फलँग फलाँगहूँतें घाटि नभतल भो।
नाइ-नाइ माथ जोरि-जोरि हाथ जोधा जोहैं,

भावार्थ—महाभारतमें अर्जुनके रथकी पताकापर कपिराज हनुमान्‌जीने गर्जन किया, जिसको सुनकर दुर्योधनकी सेनामें घबराहट उत्पन्न हो गयी। द्रोणाचार्य और भीष्मपितामहने कहा कि ये महाबली पवनकुमार हैं। जिनका बल वीररसरूपी समुद्रका जल हुआ है। इनके स्वाभाविक ही बालकोंके खेलके समान धरतीसे सूर्यतकके कुदानने आकाशमण्डलको एक पगसे भी कम कर दिया था। सब योद्धागण मस्तक नवा-नवाकर और हाथ जोड़-जोड़कर देखते हैं। इस प्रकार हनुमान्‌जीका दर्शन पानेसे उन्हें संसारमें जीनेका फल मिल गया॥ ५॥

गोपद पयोधि करि होलिका ज्यों लाई लंक,
निपट निसंक परपुर गलबल भो।

द्रोन-सो पहार लियो ख्याल ही उखारि कर,
कंदुक-ज्यों कपिखेल बेल कैसो फल भो॥
संकटसमाज असमंजस भो रामराज
काज जुग-पूगनिको करतल पल भो।
साहसी समत्थ तुलसीको नाह जाकी बाँह,
लोकपाल पालनको फिर थिर थल भो॥ ६॥

भावार्थ—समुद्रको गोखुरके समान करके निडर होकर लंका-जैसी (सुरक्षित नगरीको) होलिकाके सदृश जला डाला, जिससे पराये (शत्रुके) पुरमें गड़बड़ी मच गयी। द्रोण-जैसा भारी पर्वत खेलमें ही उखाड़ गेंदकी तरह उठा लिया, वह कपिराजके लिये बेल-फलके समान क्रीडाकी सामग्री बन गया। रामराज्यमें अपार संकट (लक्ष्मण-

शक्ति)-से असमंजस उत्पन्न हुआ (उस समय जिसके पराक्रमसे) युगसमूहमें होनेवाला काम पलभरमें मुट्ठीमें आ गया। तुलसीके स्वामी बड़े साहसी और सामर्थ्यवान् हैं, जिनकी भुजाएँ लोकपालोंको पालन करने तथा उन्हें फिरसे स्थिरतापूर्वक बसानेका स्थान हुईं॥ ६॥

कमठकी पीठि जाके गोड़निकी गाड़ैं मानो
नापके भाजन भरि जलनिधि-जल भो।
जातुधान-दावन परावनको दुर्ग भयो,
महामीनबास तिमि तोमनिको थल भो॥
कुंभकर्न-रावन-पयोदनाद-ईंधनको
तुलसी प्रताप जाको प्रबल अनल भो।
भीषम कहत मेरे अनुमान हनुमान-

सारिखो त्रिकाल न त्रिलोक महाबल भो॥ ७॥

भावार्थ—कच्छपकी पीठमें जिनके पाँवके गड़हे समुद्रका जल भरनेके लिये मानो नापके पात्र (बर्तन) हुए। राक्षसोंका नाश करते समय वह (समुद्र) ही उनके भागकर छिपनेका गढ़ हुआ तथा वही बहुत-से बड़े-बड़े मत्स्योंके रहनेका स्थान हुआ। तुलसीदासजी कहते हैं—रावण, कुम्भकर्ण और मेघनादरूपी ईंधनको जलानेके निमित्त जिनका प्रताप प्रचण्ड अग्नि हुआ। भीष्मपितामह कहते हैं—मेरी समझमें हनुमान्‌जीके समान अत्यन्त बलवान् तीनों काल और तीनों लोकमें कोई नहीं हुआ॥ ७॥

दूत रामरायको, सपूत पूत पौनको, तू
अंजनीको नंदन प्रताप भूरि भानु सो।

सीय-सोच-समन, दुरित-दोष-दमन,
सरन आये अवन, लखनप्रिय प्रान सो॥
दसमुख दुसह दरिद्र दरिबेको भयो,
प्रकट तिलोक ओक तुलसी निधान सो।
ज्ञान-गुनवान बलवान सेवा सावधान,
साहेब सुजान उर आनु हनुमान सो॥ ८॥

भावार्थ—आप राजा रामचन्द्रजीके दूत, पवनदेवके सुयोग्य पुत्र, अंजनीदेवीको आनन्द देनेवाले, असंख्य सूर्योंके समान तेजस्वी, सीताजीके शोकनाशक, पाप तथा अवगुणके नष्ट करनेवाले, शरणागतों-की रक्षा करनेवाले और लक्ष्मणजीको प्राणोंके समान प्रिय हैं। तुलसीदासजीके दुस्सह दरिद्ररूपी रावणका नाश करनेके लिये

आप तीनों लोकोंमें आश्रयरूप प्रकट हुए हैं। अरे लोगो ! तुम ज्ञानी, गुणवान्, बलवान् और सेवा (दूसरोंको आराम पहुँचाने)-में सजग हनुमान्‌जीके समान चतुर स्वामीको अपने हृदयमें बसाओ॥ ८॥

दवन-दुवन-दल भुवन-बिदित बल,
बेद जस गावत बिबुध बंदीछोर को।
पाप-ताप-तिमिर तुहिन-विघटन-पटु,
सेवक-सरोरुह सुखद भानु भोरको॥
लोक-परलोकतें बिसोक सपने न सोक,
तुलसीके हिये है भरोसो एक ओरको।
रामको दुलारो दास बामदेवको निवास,
नाम कलि-कामतरु केसरी-किसोरको॥ ९॥

भावार्थ—दानवोंकी सेनाको नष्ट करनेमें जिनका पराक्रम विश्वविख्यात है, वेद यश-गान करते हैं कि देवताओंको कारागारसे छुड़ानेवाला पवनकुमारके सिवा दूसरा कौन है ? आप पापान्धकार और कष्टरूपी पालेको घटानेमें प्रवीण तथा सेवकरूपी कमलको प्रसन्न करनेके लिये प्रातःकालके सूर्यके समान हैं। तुलसीके हृदयमें एकमात्र हनुमान्‌जीका भरोसा है, स्वप्नमें भी लोक और परलोककी चिन्ता नहीं, शोकरहित है, रामचन्द्रजीके दुलारे शिवस्वरूप (ग्यारह रुद्रमें एक) केसरीनन्दनका नाम कलिकालमें कल्पवृक्षके समान है॥ ९॥

महाबल-सीम, महाभीम, महाबानइत,
महाबीर बिदित बरायो रघुबीरको।
कुलिस-कठोरतनु जोरपरै रोर रन,

करुना-कलित मन धारमिक धीरको॥
दुर्जनको कालसो कराल पाल सज्जनको,
सुमिरे हरनहार तुलसीकी पीरको।
सीय-सुखदायक दुलारो रघुनायकको,
सेवक सहायक है साहसी समीरको॥ १०॥

भावार्थ—आप अत्यन्त पराक्रमकी हद, अतिशय कराल, बड़े बहादुर और रघुनाथजीद्वारा चुने हुए महाबलवान् विख्यात योद्धा हैं। वज्रके समान कठोर शरीरवाले जिनके जोर पड़ने अर्थात् बल करनेसे रणस्थलमें कोलाहल मच जाता है, सुन्दर करुणा एवं धैर्यके स्थान और मनसे धर्माचरण करनेवाले हैं। दुष्टोंके लिये कालके समान भयावने, सज्जनोंको पालनेवाले और स्मरण करनेसे तुलसीके दुःखको हरनेवाले

हैं। सीताजीको सुख देनेवाले, रघुनाथजीके दुलारे और सेवकोंकी सहायता करनेमें पवनकुमार बड़े ही साहसी (हिम्मतवर) हैं॥ १०॥

रचिबेको बिधि जैसे, पालिबेको हरि, हर
मीच मारिबेको, ज्याइबेको सुधापान भो।
धरिबेको धरनि, तरनि तम दलिबेको,
सोखिबे कृसानु, पोषिबेको हिम-भानु भो॥
खल-दुख-दोषिबेको, जन-परितोषिबेको,
माँगिबो मलीनताको मोदक सुदान भो।
आरतकी आरति निवारिबेको तिहूँ पुर,
तुलसीको साहेब हठीलो हनुमान भो॥ ११॥

भावार्थ—आप सृष्टिरचनाके लिये ब्रह्मा, पालन करनेको विष्णु,

मारनेको रुद्र और जिलानेके लिये अमृतपानके समान हुए; धारण करनेमें धरती, अन्धकारको नसानेमें सूर्य, सुखानेमें अग्नि, पोषण करनेमें चन्द्रमा और सूर्य हुए; खलोंको दुःख देने और दूषित बनानेवाले, सेवकोंको संतुष्ट करनेवाले एवं माँगनारूपी मैलेपनका विनाश करनेमें मोदकदाता हुए। तीनों लोकोंमें दुःखियोंके दुःख छुड़ानेके लिये तुलसीके स्वामी श्रीहनुमान्‌जी दृढ़प्रतिज्ञ हुए हैं॥ ११॥

सेवक स्योकाई जानि जानकीस मानै कानि,
सानुकूल सूलपानि नवै नाथ नाँकको।
देवी देव दानव दयावने ह्वै जोरैं हाथ,
बापुरे बराक कहा और राजा राँकको॥

जागत सोवत बैठे बागत बिनोद मोद,
ताकै जो अनर्थ सो समर्थ एक आँकको।
सब दिन रूरो परै पूरो जहाँ-तहाँ ताहि,
जाके है भरोसो हिये हनुमान हाँकको॥ १२॥

भावार्थ—सेवक हनुमान्‌जीकी सेवा समझकर जानकीनाथने संकोच माना अर्थात् एहसानसे दब गये, शिवजी पक्षमें रहते और स्वर्गके स्वामी इन्द्र नवते हैं। देवी-देवता, दानव सब दयाके पात्र बनकर हाथ जोड़ते हैं, फिर दूसरे बेचारे दरिद्र-दुःखिया राजा कौन चीज हैं। जागते, सोते, बैठते, डोलते, क्रीड़ा करते और आनन्दमें मग्न (पवनकुमारके) सेवकका अनिष्ट चाहेगा ऐसा कौन सिद्धान्तका समर्थ है? उसका जहाँ-तहाँ सब दिन श्रेष्ठ रीतिसे पूरा पड़ेगा, जिसके हृदयमें अंजनीकुमारकी हाँकका भरोसा है॥ १२॥

सानुग सगौरि सानुकूल सूलपानि ताहि,
लोकपाल सकल लखन राम जानकी।
लोक परलोकको बिसोक सो तिलोक ताहि,
तुलसी तमाइ कहा काहू बीर आनकी॥
केसरीकिसोर बंदीछोरके नेवाजे सब,
कीरति बिमल कपि करुनानिधानकी।
बालक-ज्यों पालिहैं कृपालु मुनि सिद्ध ताको,
जाके हिये हुलसति हाँक हनुमानकी॥ १३॥

भावार्थ—जिसके हृदयमें हनुमान्‌जीकी हाँक उल्लसित होती है, उसपर अपने सेवकों और पार्वतीजीके सहित शंकरभगवान्, समस्त लोकपाल,

कहते हैं फिर लोक और परलोकमें शोकरहित हुए उस प्राणीको तीनों लोकोंमें किसी योद्धाके आश्रित होनेकी क्या लालसा होगी ? दयानिकेत केसरीनन्दन निर्मल कीर्तिवाले हनुमान्‌जीके प्रसन्न होनेसे सम्पूर्ण सिद्ध-मुनि उस मनुष्यपर दयालु होकर बालकके समान पालन करते हैं, उन करुणानिधान कपीश्वरकी कीर्ति ऐसी ही निर्मल है॥ १३॥

करुना निधान, बलबुद्धिके निधान, मोद-
महिमानिधान, गुन-ज्ञानके निधान हौ।
बामदेव-रूप, भूप रामके सनेही, नाम
लेत-देत अर्थ धर्म काम निरबान हौ॥
आपने प्रभाव, सीतानाथके सुभाव सील,

लोक-बेद-बिधिके बिदुष हनुमान हौ।
मनकी, बचनकी, करमकी तिहूँ प्रकार,
तुलसी तिहारो तुम साहेब सुजान हौ॥ १४॥

भावार्थ—तुम दयाके स्थान, बुद्धि-बलके धाम, आनन्दमहिमाके मन्दिर और गुण-ज्ञानके निकेतन हो; राजा रामचन्द्रके स्नेही, शंकरजीके रूप और नाम लेनेसे अर्थ, धर्म, काम, मोक्षके देनेवाले हो। हे हनुमान्‌जी! आप अपनी शक्तिसे श्रीरघुनाथजीके शील-स्वभाव, लोक-रीति और वेद-विधिके पण्डित हो! मन, वचन, कर्म तीनों प्रकारसे तुलसी आपका दास है, आप चतुर स्वामी हैं। अर्थात् भीतर-बाहरकी सब जानते हैं॥ १४॥

मनको अगम, तन सुगम किये कपीस,
काज महाराजके समाज साज साजे हैं।
देव-बंदीछोर रनरोर केसरीकिसोर,
जुग-जुग जग तेरे बिरद बिराजे हैं॥
बीर बरजोर, घटि जोर तुलसीकी ओर
सुनि सकुचाने साधु, खलगन गाजे हैं।
बिगरी सँवार अंजनीकुमार कीजे मोहिं,
जैसे होत आये हनुमानके निवाजे हैं॥ १५॥

भावार्थ—हे कपिराज ! महाराज रामचन्द्रजीके कार्यके लिये सारा साज-समाज सजकर जो काम मनको दुर्गम था, उसको आपने शरीरसे करके सुलभ कर दिया। हे केशरीकिशोर ! आप देवताओंको बन्दीखानेसे

मुक्त करनेवाले, संग्रामभूमिमें कोलाहल मचानेवाले हैं, और आपकी नामवरी युग-युगसे संसारमें विराजती है। हे जबरदस्त योद्धा! आपका बल तुलसीके लिये क्यों घट गया, जिसको सुनकर साधु सकुचा गये हैं और दुष्टगण प्रसन्न हो रहे हैं। हे अंजनीकुमार ! मेरी बिगड़ी बात उसी तरह सुधारिये जिस प्रकार आपके प्रसन्न होनेसे होती (सुधरती) आयी है॥ १५॥

सवैया

जानसिरोमनि हौ हनुमान सदा जनके मन बास तिहारो।
ढारो बिगारो मैं काको कहा केहि कारन खीझत हौं तो तिहारो॥
साहेब सेवक नाते ते हातो कियो सो तहाँ तुलसीको न चारो।
दोष सुनाये तें आगेहुँको होशियार ह्वै हों मन तौ हिय हारो॥ १६॥

भावार्थ—हे हनुमान्‌जी ! आप ज्ञानशिरोमणि हैं और सेवकोंके मनमें

आपका सदा निवास है। मैं किसीका क्या गिराता वा बिगाड़ता हूँ। फिर आप किस कारण अप्रसन्न हैं, मैं तो आपका दास हूँ। हे स्वामी! आपने मुझे सेवकके नातेसे च्युत कर दिया, इसमें तुलसीका कोई वश नहीं है। यद्यपि मन हृदयमें हार गया है तो भी मेरा अपराध सुना दीजिये, जिसमें आगेके लिये होशियार हो जाऊँ॥ १६॥

तेरे थपे उथपै न महेस, थपै थिरको कपि जे घर घाले।
तेरे निवाजे गरीबनिवाज बिराजत बैरिनके उर साले॥
संकट सोच सबै तुलसी लिये नाम फटै मकरीके-से जाले।
बूढ़ भये, बलि, मेरिहि बार, कि हारि परे बहुतै नत पाले॥ १७॥

भावार्थ—हे वानरराज! आपके बसाये हुएको शंकरभगवान् भी नहीं उजाड़ सकते और जिस घरको आपने नष्ट कर दिया उसको कौन

बसा सकता है? हे गरीबनिवाज! आप जिसपर प्रसन्न हुए, वे शत्रुओंके हृदयमें पीड़ारूप होकर विराजते हैं। तुलसीदासजी कहते हैं, आपका नाम लेनेसे सम्पूर्ण संकट और सोच मकड़ीके जालेके समान फट जाते हैं। बलिहारी! क्या आप मेरी ही बार बूढ़े हो गये अथवा बहुत-से गरीबोंका पालन करते-करते अब थक गये हैं? (इसीसे मेरा संकट दूर करनेमें ढील कर रहे हैं)॥ १७॥

सिंधु तरे, बड़े बीर दले खल, जारे हैं लंकसे बंक मवा से।
तैं रन-केहरि केहरिके बिदले अरि-कुंजर छैल छवा से॥
तोसों समत्थ सुसाहेब सेइ सहै तुलसी दुख दोष दवा से।
बानर बाज बढ़े खल-खेचर, लीजत क्यों न लपेटि लवा-से॥ १८॥

भावार्थ—आपने समुद्र लाँघकर बड़े-बड़े दुष्ट राक्षसोंका विनाश

करके लंका-जैसे विकट गढ़को जलाया। हे संग्रामरूपी वनके सिंह! राक्षस शत्रु बने-ठने हाथीके बच्चेके समान थे, आपने उनको सिंहकी भाँति विनष्ट कर डाला। आपके बराबर समर्थ और अच्छे स्वामीकी सेवा करते हुए तुलसी दोष और दुःखकी आगको सहन करे [यह आश्चर्यकी बात है]। हे वानररूपी बाज ! बहुत-से दुष्टजनरूपी पक्षी बढ़ गये हैं, उनको आप बटेरके समान क्यों नहीं लपेट लेते?॥ १८॥

अच्छ-बिमर्दन कानन-भानि दसानन आनन भा न निहारो।
बारिदनाद अकंपन कुंभकरन्न-से कुंजर केहरि-बारो॥
राम-प्रताप-हुतासन, कच्छ, बिपच्छ, समीर समीरदुलारो।
पापतें, सापतें, ताप तिहूँतें सदा तुलसी कहँ सो रखवारो॥ १९॥

भावार्थ—हे अक्षयकुमारको मारनेवाले हनुमान्‌जी ! आपने अशोक-

वाटिकाको विध्वंस किया और रावण-जैसे प्रतापी योद्धाके मुखके तेजकी ओर देखातक नहीं अर्थात् उसकी कुछ भी परवाह नहीं की। आप मेघनाद, अकम्पन और कुम्भकर्ण-सरीखे हाथियोंके मदको चूर्ण करनेमें किशोरावस्थाके सिंह हैं। विपक्षरूप तिनकोंके ढेरके लिये भगवान् रामका प्रताप अग्नितुल्य है और पवनकुमार उसके लिये पवनरूप हैं। वे पवननन्दन ही तुलसीदासको सर्वदा पाप, शाप और संताप—तीनोंसे बचानेवाले हैं॥ १९॥

घनाक्षरी

जानत जहान हनुमानको निवाज्यौ जन,
मन अनुमानि, बलि, बोल न बिसारिये।
सेवा-जोग तुलसी कबहुँ कहा चूक परी,
साहेब सुभाव कपि साहिबी सँभारिये॥

साहेब सुभाव कपि साहिबी सँभारिये॥
अपराधी जानि कीजै सासति सहस भाँति,
मोदक मरै जो, ताहि माहुर न मारिये।
साहसी समीरके दुलारे रघुबीरजूके,
बाँह पीर महाबीर बेगि ही निवारिये॥ २०॥

भावार्थ—हे हनुमान्‌जी ! बलि जाता हूँ, अपनी प्रतिज्ञाको न भुलाइये, जिसको संसार जानता है, मनमें विचारिये, आपका कृपापात्र जन बाधारहित और सदा प्रसन्न रहता है। हे स्वामी कपिराज ! तुलसी कभी सेवाके योग्य था? क्या चूक हुई है, अपनी साहिबीको सँभालिये, मुझे अपराधी समझते हों तो सहस्रों भाँतिकी दुर्दशा कीजिये, किंतु जो लड्डू देनेसे मरता हो उसको विषसे न मारिये। हे महाबली, साहसी, पवनके दुलारे, रघुनाथजीके

प्यारे! भुजाओंकी पीड़ाको शीघ्र ही दूर कीजिये॥ २०॥

बालक बिलोकि, बलि, बारेतें आपनो कियो,
दीनबंधु दया कीन्हीं निरुपाधि न्यारिये।
रावरो भरोसो तुलसीके, रावरोई बल,
आस रावरीयै, दास रावरो बिचारिये॥
बड़ो बिकराल कलि, काको न बिहाल कियो,
माथे पगु बलीको, निहारि सो निवारिये।
केसरीकिसोर, रनरोर, बरजोर बीर,
बाँहुपीर राहुमातु ज्यौं पछारि मारिये॥ २१॥

भावार्थ—हे दीनबन्धु ! बलि जाता हूँ, बालकको देखकर आपने

लड़कपनसे ही अपनाया और मायारहित अनोखी दया की। सोचिये तो सही, तुलसी आपका दास है, इसको आपका भरोसा, आपका ही बल और आपकी ही आशा है। अत्यन्त भयानक कलिकालने किसको बेचैन नहीं किया? इस बलवान्‌का पैर मेरे मस्तकपर भी देखकर उसको हटाइये। हे केशरीकिशोर, बरजोर वीर! आप रणमें कोलाहल उत्पन्न करनेवाले हैं, राहुकी माता सिंहिकाके समान बाहुकी पीड़ाको पछाड़कर मार डालिये॥ २१॥

उथपे थपनथिर थपे उथपनहार,
केसरीकुमार बल आपनो सँभारिये।
रामके गुलामनिको कामतरु रामदूत,
मोसे दीन दूबरेको तकिया तिहारिये॥

साहेब समर्थ तोसों तुलसीके माथे पर,
सोऊ अपराध बिनु बीर, बाँधि मारिये।
पोखरी बिसाल बाँहु, बलि बारिचर पीर,
मकरी ज्यों पकरिकै बदन बिदारिये॥ २२॥

भावार्थ—हे केशरीकुमार! आप उजड़े हुए (सुग्रीव-विभीषण)-को बसानेवाले और बसे हुए (रावणादि)-को उजाड़नेवाले हैं, अपने उस बलका स्मरण कीजिये। हे रामदूत! रामचन्द्रजीके सेवकोंके लिये आप कल्पवृक्ष हैं और मुझ-सरीखे दीन-दुर्बलोंको आपका ही सहारा है। हे वीर! तुलसीके माथेपर आपके समान समर्थ स्वामी विद्यमान रहते हुए भी वह बाँधकर मारा जाता है। बलि जाता हूँ, मेरी भुजा विशाल पोखरीके समान है और यह पीड़ा उसमें जलचरके सदृश है, सो आप मकरीके

समान इस जलचरीको पकड़कर इसका मुख फाड़ डालिये॥ २२॥

रामको सनेह, राम साहस लखन सिय,
रामकी भगति, सोच संकट निवारिये।
मुद-मरकट रोग-बारिनिधि हेरि हारे,
जीव-जामवंतको भरोसो तेरो भारिये॥
कूदिये कृपाल तुलसी सुप्रेम-पब्बयतें,
सुथल सुबेल भालु बैठिकै बिचारिये।
महाबीर बाँकुरे बराकी बाँहपीर क्यों न,
लंकिनी ज्यों लातघात ही मरोरि मारिये॥ २३॥

भावार्थ—मुझमें रामचन्द्रजीके प्रति स्नेह, रामचन्द्रजीकी भक्ति, राम-

लक्ष्मण और जानकीजीकी कृपासे साहस (दृढ़तापूर्वक कठिनाइयोंका सामना करनेकी हिम्मत) है, अत: मेरे शोक-संकटको दूर कीजिये। आनन्दरूपी बंदर रोगरूपी अपार समुद्रको देखकर मनमें हार गये हैं, जीवरूपी जाम्बवन्तको आपका बड़ा भरोसा है। हे कृपालु! तुलसीके सुन्दर प्रेमरूपी पर्वतसे कूदिये, श्रेष्ठ स्थान (हृदय)-रूपी सुबेलपर्वतपर बैठे हुए जीवरूपी जाम्बवन्तजी सोचते (प्रतीक्षा करते) हैं। हे महाबली बाँके योद्धा! मेरे बाहुकी पीड़ारूपिणी लंकिनीको लातकी चोटसे क्यों नहीं मरोड़कर मार डालते?॥ २३॥

लोक-परलोकहूँ तिलोक न बिलोकियत,
तोसे समरथ चष चारिहूँ निहारिये।
कर्म, काल, लोकपाल, अग-जग जीवजाल,
नाथ हाथ सब निज महिमा बिचारिये॥

खास दास रावरो, निवास तेरो तासु उर,
तुलसी सो देव दुखी देखियत भारिये।
बात तरुमूल बाँहुसूल कपिकच्छु-बेलि,
उपजी सकेलि कपिकेलि ही उखारिये॥ २४॥

भावार्थ—लोक, परलोक और तीनों लोकोंमें चारों नेत्रोंसे देखता हूँ, आपके समान योग्य कोई नहीं दिखायी देता। हे नाथ! कर्म, काल, लोकपाल तथा सम्पूर्ण स्थावर-जंगम जीवसमूह आपके ही हाथमें हैं, अपनी महिमाको विचारिये। हे देव! तुलसी आपका निजी सेवक है, उसके हृदयमें आपका निवास है और वह भारी दुःखी दिखायी देता है। वातव्याधिजनित बाहुकी पीड़ा केवाँचकी लताके समान है, उसकी उत्पन्न

हुई जड़को बटोरकर वानरी खेलसे उखाड़ डालिये॥ २४॥

करम-कराल-कंस भूमिपालके भरोसे,
बकी बकभगिनी काहूतें कहा डरैगी।
बड़ी बिकराल बालघातिनी न जात कहि,
बाँहुबल बालक छबीले छोटे छरैगी॥
आई है बनाइ बेष आप ही बिचारि देख,
पाप जाय सबको गुनीके पाले परैगी।
पूतना पिसाचिनी ज्यौं कपिकान्ह तुलसीकी,
बाँहपीर महाबीर, तेरे मारे मरैगी॥ २५॥

भावार्थ—कर्मरूपी भयंकर कंसराजाके भरोसे बकासुरकी बहिन पूतना राक्षसी क्या किसीसे डरेगी? बालकोंको मारनेमें बड़ी भयावनी,

जिसकी लीला कही नहीं जाती है, वह अपने बाहुबलसे छोटे छबिमान् शिशुओंको छलेगी। आप ही विचारकर देखिये, वह सुन्दर रूप बनाकर आयी है, यदि आप-सरीखे गुणीके पाले पड़ेगी तो सभीका पाप दूर हो जायगा। हे महाबली कपिराज ! तुलसीकी बाहुकी पीड़ा पूतना पिशाचिनीके समान है और आप बालकृष्णरूप हैं, यह आपके ही मारनेसे मरेगी॥ २५॥

भालकी कि कालकी कि रोषकी त्रिदोषकी है,
बेदन बिषम पाप-ताप छलछाँहकी।
करमन कूटकी कि जंत्रमंत्र बूटकी,
पराहि जाहि पापिनी मलीन मनमाँहकी॥
पैहहि सजाय नत कहत बजाय तोहि,

बावरी न होहि बानि जानि कपिनाँहकी।
आन हनुमानकी दोहाई बलवानकी,
सपथ महाबीरकी जो रहै पीर बाँहकी॥ २६॥

भावार्थ—यह कठिन पीड़ा कपालकी लिखावट है या समय, क्रोध अथवा त्रिदोषका या मेरे भयंकर पापोंका परिणाम है, दुःख किंवा धोखेकी छाया है। मारणादि प्रयोग अथवा यन्त्र-मन्त्ररूपी वृक्षका फल है; अरी मनकी मैली पापिनी पूतना! भाग जा, नहीं तो मैं डंका पीटकर कहे देता हूँ कि कपिराजका स्वभाव जानकर तू पगली न बने। जो बाहुकी पीड़ा रहे तो मैं महाबीर बलवान् हनुमान्जीकी दोहाई और सौगन्ध करता हूँ अर्थात् अब वह नहीं रह सकती॥ २६॥

सिंहिका सँहारि बल, सुरसा सुधारि छल,
लंकिनी पछारि मारि बाटिका उजारी है।
लंक परजारि मकरी बिदारि बारबार,
जातुधान धारि धूरिधानी करि डारी है॥
तोरि जमकातरि मदोदरि कढ़ोरि आनी,
रावनकी रानी मेघनाद महँतारी है।
भीर बाँहपीरकी निपट राखी महाबीर,
कौनके सकोच तुलसीके सोच भारी है॥ २७॥

भावार्थ—सिंहिकाके बलका संहार करके सुरसाके छलको सुधारकर लंकिनीको मार गिराया और अशोकवाटिकाको उजाड़ डाला। लंकापुरीको अच्छी तरहसे जलाकर मकरीको विदीर्ण करके बारंबार राक्षसोंकी सेनाका

विनाश किया। यमराजका खड्ग अर्थात् परदा फाड़कर मेघनादकी माता और रावणकी पटरानी मन्दोदरीको राजमहलसे बाहर निकाल लाये। हे महाबली कपिराज ! तुलसीको बड़ा सोच है, किसके संकोचमें पड़कर आपने केवल मेरे बाहुकी पीड़ाके भयको छोड़ रखा है॥ २७॥

तेरो बालकेलि बीर सुनि सहमत धीर,
भूलत सरीरसुधि सक्र-रबि-राहुकी।
तेरी बाँह बसत बिसोक लोकपाल सब,
तेरो नाम लेत रहै आरति न काहुकी॥
साम दान भेद बिधि बेदहू लबेद सिधि,
हाथ कपिनाथहीके चोटी चोर साहुकी।

आलस अनख परिहासकै सिखावन है,
एते दिन रही पीर तुलसीके बाहुकी॥ २८॥

भावार्थ—हे वीर! आपके लड़कपनका खेल सुनकर धीरजवान् भी भयभीत हो जाते हैं और इन्द्र, सूर्य तथा राहुको अपने शरीरकी सुध भुला जाती है। आपके बाहुबलसे सब लोकपाल शोकरहित होकर बसते हैं और आपका नाम लेनेसे किसीका दु:ख नहीं रह जाता। साम, दान और भेद-नीतिका विधान तथा वेद-लवेदसे भी सिद्ध है कि चोर-साहुकी चोटी कपिनाथके ही हाथमें रहती है। तुलसीदासके जो इतने दिन बाहुकी पीड़ा रही है सो क्या आपका आलस्य है अथवा क्रोध, परिहास या शिक्षा है॥ २८॥

टूकनिको घर-घर डोलत कँगाल बोलि,
बाल ज्यों कृपाल नतपाल पालि पोसो है।

कीन्ही है सँभार सार अंजनीकुमार बीर,
आपनो बिसारिहैं न मेरेहू भरोसो है॥
इतनो परेखो सब भाँति समरथ आजु,
कपिराज साँची कहौं को तिलोक तोसो है।
सासति सहत दास कीजे पेखि परिहास,
चीरीको मरन खेल बालकनिको सो है॥ २९॥

भावार्थ—हे गरीबोंके पालन करनेवाले कृपानिधान! टुकड़ेके लिये दरिद्रतावश घर-घर मैं डोलता-फिरता था, आपने बुलाकर बालकके समान मेरा पालन-पोषण किया है। हे वीर अंजनीकुमार! मुख्यत: आपने ही मेरी रक्षा की है, अपने जनको आप न भुलायेंगे, इसका मुझे भी भरोसा है। हे कपिराज! आज आप सब प्रकार समर्थ हैं, मैं सच कहता हूँ, आपके

समान भला तीनों लोकोंमें कौन है? किंतु मुझे इतना परेखा (पछतावा) है कि यह सेवक दुर्दशा सह रहा है, लड़कोंका खेलवाड़ होनेके समान चिड़ियाकी मृत्यु हो रही है और आप तमाशा देखते हैं॥ २९॥

आपने ही पापतें त्रितापतें कि सापतें,
बढ़ी है बाँहबेदन कही न सहि जाति है।
औषध अनेक जंत्र-मंत्र-टोटकादि किये,
बादि भये देवता मनाये अधिकाति है॥
करतार, भरतार, हरतार, कर्म, काल,
को है जगजाल जो न मानत इताति है।
चेरो तेरो तुलसी तू मेरो कह्यो रामदूत,
ढील तेरी बीर मोहि पीरतें पिराति है॥ ३०॥

भावार्थ—मेरे ही पाप वा तीनों ताप अथवा शापसे बाहुकी पीड़ा बढ़ी है, वह न कही जाती और न सही जाती है। अनेक ओषधि, यन्त्र-मन्त्र-टोटकादि किये, देवताओंको मनाया, पर सब व्यर्थ हुआ, पीड़ा बढ़ती ही जाती है। ब्रह्मा, विष्णु, महेश, कर्म, काल और संसारका समूह-जाल कौन ऐसा है जो आपकी आज्ञाको न मानता हो। हे रामदूत! तुलसी आपका दास है और आपने इसको अपना सेवक कहा है। हे वीर! आपकी यह ढील मुझे इस पीड़ासे भी अधिक पीड़ित कर रही है॥ ३०॥

दूत रामरायको, सपूत पूत बायको,
समत्थ हाथ पायको सहाय असहायको।
बाँकी बिरदावली बिदित बेद गाइयत,
रावन सो भट भयो मुठिकाके घायको॥

रावन सो भट भयो मुठिकाके घायको॥
एते बड़े साहेब समर्थको निवाजो आज,
सीदत सुसेवक बचन मन कायको।
थोरी बाँहपीरकी बड़ी गलानि तुलसीको,
कौन पाप कोप, लोप प्रगट प्रभायको॥ ३१॥

भावार्थ—आप राजा रामचन्द्रके दूत, पवनदेवके सत्पुत्र, हाथ-पाँवके समर्थ और निराश्रितोंके सहायक हैं। आपके सुन्दर यशकी कथा विख्यात है, वेद गान करते हैं और रावण-जैसा त्रिलोकविजयी योद्धा आपके घूँसेकी चोटसे घायल हो गया। इतने बड़े योग्य स्वामीके अनुग्रह करनेपर भी आपका श्रेष्ठ सेवक आज तन-मन-वचनसे दुःख पा रहा है। तुलसीको इस थोड़ी-सी बाहु-पीड़ाकी बड़ी ग्लानि है, मेरे कौन-से पापके कारण

वा क्रोधसे आपका प्रत्यक्ष प्रभाव लुप्त हो गया है ? ॥ ३१॥

देवी देव दनुज मनुज मुनि सिद्ध नाग,
छोटे बड़े जीव जेते चेतन अचेत हैं।
पूतना पिसाची जातुधानी जातुधान बाम,
रामदूतकी रजाइ माथे मानि लेत हैं॥
घोर जंत्र मंत्र कूट कपट कुरोग जोग,
हनूमान आन सुनि छाड़त निकेत हैं।
क्रोध कीजे कर्मको प्रबोध कीजे तुलसीको,
सोध कीजे तिनको जो दोष दुख देत हैं॥ ३२॥

भावार्थ—देवी, देवता, दैत्य, मनुष्य, मुनि, सिद्ध और नाग आदि छोटे-बड़े जितने जड़-चेतन जीव हैं तथा पूतना, पिशाचिनी, राक्षसी-

राक्षस जितने कुटिल प्राणी हैं, वे सभी रामदूत पवनकुमारकी आज्ञा शिरोधार्य करके मानते हैं। भीषण यन्त्र-मन्त्र, धोखाधारी, छलबाज और दुष्ट रोगोंके आक्रमण हनुमान्‌जीकी दोहाई सुनकर स्थान छोड़ देते हैं। मेरे खोटे कर्मपर क्रोध कीजिये, तुलसीको सिखावन दीजिये और जो दोष हमें दुःख देते हैं उनका सुधार करिये॥ ३२॥

तेरे बल बानर जिताये रन रावनसों,
तेरे घाले जातुधान भये घर-घरके।
तेरे बल रामराज किये सब सुरकाज,
सकल समाज साज साजे रघुबरके॥
तेरो गुनगान सुनि गीरबान पुलकत,
सजल बिलोचन बिरंचि हरि हरके।

तुलसीके माथेपर हाथ फेरो कीसनाथ,
देखिये न दास दुखी तोसे कनिगरके॥ ३३॥

भावार्थ—आपके बलने युद्धमें वानरोंको रावणसे जिताया और आपके ही नष्ट करनेसे राक्षस घर-घरके (तीन-तेरह) हो गये। आपके ही बलसे राजा रामचन्द्रजीने देवताओंका सब काम पूरा किया और आपने ही रघुनाथजीके समाजका सम्पूर्ण साज सजाया। आपके गुणोंका गान सुनकर देवता रोमाञ्चित होते हैं और ब्रह्मा, विष्णु, महेशकी आँखोंमें जल भर आता है। हे वानरोंके स्वामी ! तुलसीके माथेपर हाथ फेरिये, आप-जैसे अपनी मर्यादाकी लाज रखनेवालोंके दास कभी दुखी नहीं देखे गये॥ ३३॥

पालो तेरे टूकको परेहू चूक मूकिये न,

पालो तेरे टूकको परेहू चूक मूकिये न,
कूर कौड़ी दूको हौं आपनी ओर हेरिये।
भोरानाथ भोरेही सरोष होत थोरे दोष,
पोषि तोषि थापि आपनो न अवडेरिये॥
अंबु तू हौं अंबुचर, अंब तू हौं डिंभ, सो न,
बूझिये बिलंब अवलंब मेरे तेरिये।
बालक बिकल जानि पाहि प्रेम पहिचानि,
तुलसीकी बाँह पर लामीलूम फेरिये॥ ३४॥

भावार्थ—आपके टुकड़ोंसे पला हूँ, चूक पड़नेपर भी मौन न हो जाइये। मैं कुमार्गी दो कौड़ीका हूँ, पर आप अपनी ओर देखिये। हे भोलानाथ! अपने भोलेपनसे ही आप थोड़े दोषसे रुष्ट हो जाते हैं, सन्तुष्ट

होकर मेरा पालन करके मुझे बसाइये, अपना सेवक समझकर दुर्दशा न कीजिये। आप जल हैं तो मैं मछली हूँ, आप माता हैं तो मैं छोटा बालक हूँ, देरी न कीजिये, मुझको आपका ही सहारा है। बच्चेको व्याकुल जानकर प्रेमकी पहचान करके रक्षा कीजिये, तुलसीकी बाँहपर अपनी लंबी पूँछ फेरिये (जिससे पीड़ा निर्मूल हो जावे)॥ ३४॥

घेरि लियो रोगनि कुजोगनि कुलोगनि ज्यौं,
बासर जलद घन घटा धुकि धाई है।
बरसत बारि पीर जारिये जवासे जस,
रोष बिनु दोष, धूम-मूल मलिनाई है॥
करुनानिधान हनुमान महाबलवान,
हेरि हँसि हाँकि फूँकि फौजें तैं उड़ाई है।

खाये हुतो तुलसी कुरोग राढ़ राकसनि,
केसरीकिसोर राखे बीर बरिआई है॥ ३५॥

भावार्थ—रोगों, बुरे योगों और दुष्ट लोगोंने मुझे इस प्रकार घेर लिया है जैसे दिनमें बादलोंका घना समूह झपटकर आकाशमें दौड़ता है। पीड़ारूपी जल बरसाकर इन्होंने क्रोध करके बिना अपराध यशरूपी जवासेको अग्निकी तरह झुलसकर मूर्च्छित कर दिया। हे दयानिधान महाबलवान् हनुमान्जी! आप हँसकर निहारिये और ललकारकर विपक्षकी सेनाको अपनी फूँकसे उड़ा दीजिये। हे केशरीकिशोर वीर! तुलसीको कुरोगरूपी निर्दय राक्षसने खा लिया था, आपने जोरावरीसे मेरी रक्षा की है॥ ३५॥

सवैया

रामगुलाम तुही हनुमान
गोसाँइ सुसाँइ सदा अनुकूलो।

पाल्यो हौं बाल ज्यों आखर दू
पितु मातु सों मंगल मोद समूलो॥
बाँहकी बेदन बाँहपगार
पुकारत आरत आनँद भूलो।
श्रीरघुबीर निवारिये पीर
रहौं दरबार परो लटि लूलो॥ ३६॥

भावार्थ—हे गोस्वामी हनुमान्जी! आप श्रेष्ठ स्वामी और सदा श्रीरामचन्द्रजीके सेवकोंके पक्षमें रहनेवाले हैं। आनन्द-मंगलके मूल दोनों अक्षरों (राम-नाम)-ने माता-पिताके समान मेरा पालन किया है। हे बाहुपगार (भुजाओंका आश्रय देनेवाले)! बाहुकी पीड़ासे मैं सारा आनन्द भुलाकर दु:खी होकर पुकार रहा हूँ। हे रघुकुलके वीर! पीड़ाको दूर कीजिये, जिससे

दुर्बल और पंगु होकर भी आपके दरबारमें पड़ा रहूँ॥ ३६॥

घनाक्षरी

कालकी करालता करम कठिनाई कीधौं,
पापके प्रभावकी सुभाय बाय बावरे।
बेदन कुभाँति सो सही न जाति राति दिन,
सोई बाँह गही जो गही समीरडावरे॥
लायो तरु तुलसी तिहारो सो निहारि बारि,
सींचिये मलीन भो तयो है तिहूँ तावरे।
भूतनिकी आपनी परायेकी कृपानिधान,
जानियत सबहीकी रीति राम रावरे॥ ३७॥

भावार्थ—न जाने कालकी भयानकता है कि कर्मोंकी कठिनता है,

पापका प्रभाव है अथवा स्वाभाविक बातकी उन्मत्तता है। रात-दिन बुरी तरहकी पीड़ा हो रही है, जो सही नहीं जाती और उसी बाँहको पकड़े हुए है जिसको पवनकुमारने पकड़ा था। तुलसीरूपी वृक्ष आपका ही लगाया हुआ है। यह तीनों तापोंकी ज्वालासे झुलसकर मुरझा गया है, इसकी ओर निहारकर कृपारूपी जलसे सींचिये। हे दयानिधान रामचन्द्रजी! आप भूतोंकी, अपनी और विरानेकी सबकी रीति जानते हैं॥ ३७॥

पायँपीर पेटपीर बाँहपीर मुँहपीर,
जरजर सकल सरीर पीरमई है।
देव भूत पितर करम खल काल ग्रह,
मोहिपर दवरि दमानक सी दई है॥
हौं तो बिन मोलके बिकानो बलि बारेही तें,

ओट रामनामकी ललाट लिखि लई है।
कुंभजके किंकर बिकल बूड़े गोखुरनि,
हाय रामराय ऐसी हाल कहूँ भई है॥ ३८॥

भावार्थ—पाँवकी पीड़ा, पेटकी पीड़ा, बाहुकी पीड़ा और मुखकी पीड़ा—सारा शरीर पीड़ामय होकर जीर्ण-शीर्ण हो गया है। देवता, प्रेत, पितर, कर्म, काल और दुष्टग्रह—सब साथ ही दौरा करके मुझपर तोपोंकी बाड़-सी दे रहे हैं। बलि जाता हूँ। मैं तो लड़कपनसे ही आपके हाथ बिना मोल बिका हुआ हूँ और अपने कपालमें रामनामका आधार लिख लिया है। हाय राजा रामचन्द्रजी ! कहीं ऐसी दशा भी हुई है कि अगस्त्य मुनिका सेवक गायके खुरमें डूब गया हो॥ ३८॥

बाहुक-सुबाहु नीच लीचर-मरीच मिलि,
मुँहपीर-केतुजा कुरोग जातुधान हैं।

राम नाम जपजाग कियो चहों सानुराग,
काल कैसे दूत भूत कहा मेरे मान हैं॥
सुमिरे सहाय रामलखन आखर दोऊ,
जिनके समूह साके जागत जहान हैं।
तुलसी सँभारि ताड़का-सँहारि भारी भट,
बेधे बरगदसे बनाइ बानवान हैं॥ ३९॥

भावार्थ—बाहुकी पीड़ारूप नीच सुबाहु और देहकी अशक्तिरूप मारीच राक्षस और ताड़कारूपिणी मुखकी पीड़ा एवं अन्यान्य बुरे रोगरूप राक्षसोंसे मिले हुए हैं। मैं रामनामका जपरूपी यज्ञ प्रेमके साथ करना चाहता हूँ, पर कालदूतके समान ये भूत क्या मेरे काबूके हैं? (कदापि नहीं।) संसारमें जिनकी बड़ी नामवरी हो रही है वे (रा और म) दोनों अक्षर स्मरण करनेपर मेरी सहायता करेंगे। हे तुलसी! तू ताड़काका वध करनेवाले भारी योद्धाका स्मरण कर, वह इन्हें अपने बाणका निशाना बनाकर बड़के फलके समान भेदन (स्थानच्युत) कर देंगे॥ ३९॥

बालपने सूधे मन राम सनमुख भयो,
रामनाम लेत माँगि खात टूकटाक हौं।
पर्‌यो लोकरीतिमें पुनीत प्रीति रामराय,
मोहबस बैठो तोरि तरकितराक हौं॥
खोटे-खोटे आचरन आचरत अपनायो,
अंजनीकुमार सोध्यो रामपानि पाक हौं।
तुलसी गोसाइँ भयो भोंड़े दिन भूलि गयो,
ताको फल पावत निदान परिपाक हौं॥ ४०॥

भावार्थ—मैं बाल्यावस्थासे ही सीधे मनसे श्रीरामचन्द्रजीके सम्मुख हुआ, मुँहसे रामनाम लेता टुकड़ा-टुकड़ी माँगकर खाता था। (फिर युवावस्थामें)

लोकरीतिमें पड़कर अज्ञानवश राजा रामचन्द्रजीके चरणोंकी पवित्र प्रीतिको चटपट (संसारमें) कूदकर तोड़ बैठा। उस समय खोटे-खोटे आचरणोंको करते हुए मुझे अंजनीकुमारने अपनाया और रामचन्द्रजीके पुनीत हाथोंसे मेरा सुधार करवाया। तुलसी गोसाईं हुआ, पिछले खराब दिन भुला दिये, आखिर उसीका फल आज अच्छी तरह पा रहा हूँ॥ ४०॥

असन-बसन-हीन बिषम-बिषाद-लीन,
देखि दीन दूबरो करै न हाय-हाय को।
तुलसी अनाथसो सनाथ रघुनाथ कियो,
दियो फल सीलसिंधु आपने सुभायको॥
नीच यहि बीच पति पाइ भरुहाइगो,
बिहाइ प्रभु-भजन बचन मन कायको।

तातें तनु पेषियत घोर बरतोर मिस,
फूटि-फूटि निकसत लोन रामरायको॥ ४१॥

भावार्थ—जिसे भोजन-वस्त्रसे रहित भयंकर विषादमें डूबा हुआ और दीन-दुर्बल देखकर ऐसा कौन था जो हाय-हाय नहीं करता था, ऐसे अनाथ तुलसीको दयासागर स्वामी रघुनाथजीने सनाथ करके अपने स्वभावसे उत्तम फल दिया। इस बीचमें यह नीच जन प्रतिष्ठा पाकर फूल उठा (अपनेको बड़ा समझने लगा) और तन-मन-वचनसे रामजीका भजन छोड़ दिया, इसीसे शरीरमेंसे भयंकर बरतोरके बहाने रामचन्द्रजीका नमक फूट-फूटकर निकलता दिखायी दे रहा है॥ ४१॥

जिओं जग जानकीजीवनको कहाइ जन,
मरिबेको बारानसी बारि सुरसरिको।

तुलसीके दुहूँ हाथ मोदक है ऐसे ठाउँ,
जाके जिये मुये सोच करिहैं न लरिको॥
मोको झूठो साँचो लोग रामको कहत सब,
मेरे मन मान है न हरको न हरिको।
भारी पीर दुसह सरीरतें बिहाल होत,
सोऊ रघुबीर बिनु सकै दूर करिको॥ ४२॥

भावार्थ—जानकी-जीवन रामचन्द्रजीका दास कहलाकर संसारमें जीवित रहूँ और मरनेके लिये काशी तथा गंगाजल अर्थात् सुरसरितीर है। ऐसे स्थानमें (जीवन-मरणसे) तुलसीके दोनों हाथोंमें लड्डू है, जिसके जीने-मरनेसे लड़के भी सोच न करेंगे। सब लोग मुझको झूठा-सच्चा रामका ही दास कहते हैं और मेरे मनमें भी इस बातका गर्व है कि मैं रामचन्द्रजीको छोड़कर न शिवका भक्त हूँ,

न विष्णुका। शरीरकी भारी पीड़ासे विकल हो रहा हूँ, उसको बिना रघुनाथजीके कौन दूर कर सकता है ?॥ ४२॥

सीतापति साहेब सहाय हनुमान नित,
हित उपदेसको महेस मानो गुरुकै।
मानस बचन काय सरन तिहारे पाँय,
तुम्हरे भरोसे सुर मैं न जाने सुरकै॥
ब्याधि भूतजनित उपाधि काहू खलकी,
समाधि कीजे तुलसीको जानि जन फुरकै।
कपिनाथ रघुनाथ भोलानाथ भूतनाथ,
रोगसिंधु क्यों न डारियत गाय खुरकै॥ ४३॥

भावार्थ—हे हनुमान्‌जी ! स्वामी सीतानाथजी आपके नित्य ही सहायक

हैं और हितोपदेशके लिये महेश मानो गुरु ही हैं। मुझे तो तन, मन, वचनसे आपके चरणोंकी ही शरण है, आपके भरोसे मैंने देवताओंको देवता करके नहीं माना। रोग व प्रेत-द्वारा उत्पन्न अथवा किसी दुष्टके उपद्रवसे हुई पीड़ाको दूर करके तुलसीको अपना सच्चा सेवक जानकर इसकी शान्ति कीजिये। हे कपिनाथ, रघुनाथ, भोलानाथ और भूतनाथ! रोगरूपी महासागरको गायके खुरके समान क्यों नहीं कर डालते?॥ ४३॥

कहों हनुमानसों सुजान रामरायसों,
कृपानिधान संकरसों सावधान सुनिये।
हरष विषाद राग रोष गुन दोषमई,
बिरची बिरंचि सब देखियत दुनिये॥
माया जीव कालके करमके सुभायके,

करैया राम बेद कहैं साँची मन गुनिये।
तुम्हतें कहा न होय हाहा सो बुझैये मोहि,
हौं हूँ रहों मौन ही बयो सो जानि लुनिये॥ ४४॥

भावार्थ—मैं हनुमान्‌जीसे, सुजान राजा रामसे और कृपानिधान शंकरजीसे कहता हूँ, उसे सावधान होकर सुनिये। देखा जाता है कि विधाताने सारी दुनियाको हर्ष, विषाद, राग, रोष, गुण और दोषमय बनाया है। वेद कहते हैं कि माया, जीव, काल, कर्म और स्वभावके करनेवाले रामचन्द्रजी हैं। इस बातको मैंने चित्तमें सत्य माना है। मैं विनती करता हूँ, मुझे यह समझा दीजिये कि आपसे क्या नहीं हो सकता। फिर मैं भी यह जानकर चुप रहूँगा कि जो बोया है वही काटता हूँ॥ ४४॥

इति शुभम्